हिन्दी साहित्य में कृष्ण काव्यधारा

नेहा शर्मा*
डॉ. रेखा कुमारी**

सारांश -

मध्यकालीन सगुण भक्ति के आराध्य देवताओं में भगवान श्रीकृष्ण का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है। पुराणों की कथाओं में इनका स्थान सर्वोपरि है। महाभारत में योगेश्वर कृष्ण का राजनीति विशारद महान् योद्धा के रूप में चित्रण किया गया है तथा भागवत पुराण में श्रीकृष्ण की बाल लीला तथा रासलीला का चित्रण है। आचार्य शुक्ल ने श्रीकृष्ण की भक्ति के संबंध में अपने विचार प्रकट किए हैं "जनता पर चाहे जो प्रभाव पड़ा हो पर उक्त गद्दी के भक्त शिष्यों ने सुंदर सुंदर पदों द्वारा जो मनोहर प्रेम संगीत की धारा बहाई, उसने मुरझाते हुए हिन्दू जीवन को सरस और प्रफुल्लित कर दिया। इस संगीत धारा में दूसरे सम्प्रदायों के कृष्णभक्तों ने भी पुरा योग दिया।" कृष्ण भक्ति में कृष्ण का मधुर रूप ही सबके सामने आया और उनका लोकरक्षक और मर्यादा पूर्ण धर्म संस्थापक का चरित्र उद्घाटित नहीं हो पाया। विभिन्न कृष्ण भक्त कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से प्रभु की विशद व्याख्या प्रस्तुत की है।

कूटशब्द – काव्यधारा, अष्टछाप, सूरदास, योगेश्वर कृष्ण, विशारद, उपालम्भ, दयानिधि, रसखान।

- **प्रस्तावना**

'इतिहास' शब्द से सामान्यतः राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास का ही भान हमें होता है। परन्तु हमारी सृष्टि की हर एक वस्तु का अपना इतिहास है। जब हम साहित्य का इतिहास पढ़ते हैं तो उसमें हमें साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टिकोण से करते हैं। साहित्यकारों की सर्जनात्मक क्रियाओं एवं प्रवृत्तियों का सूचक उनकी साहित्यिक रचनाऐं होती हैं। साहित्य का इतिहास रचनाकारों का जीवन परिचय एवं उसकी कृतियों के उल्लेख मात्र से पूरा नहीं होता अपितु उसमें युगीन परिस्थितियों के संदर्भ में कवि की प्रवृत्तियों का विश्लेषण भी होता है।

हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखन का सूत्रपात 19वीं शताब्दी से माना जाता है। सर्वप्रथम फ्रेंच विद्वान् 'गार्सा-द-तासी' द्वारा 'ईस्तवार द ला लिटरेव्यूर ऐन्दुई ऐन्दुस्तानी' नामक ग्रंथ की रचना दो भागों में की गई। प्रथम भाग का प्रकाशन 1839 में तथा द्वितीय भाग का प्रकाशन 1847 में हुआ। दूसरी महत्त्वपूर्ण कृति 'शिवसिंह सरोज' की रचना 'शिवसिंह सेंगर' द्वारा 1883 में की गई। सर जार्ज ग्रियर्सन ने 'द मार्डन वर्नेक्यूलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान' की रचना 1888 में की। मिश्र बंधुओं ने 'मिश्र बन्धु विनोद' नामक महत्त्वपूर्ण कृति की रचना चार भागों में की। जिसके प्रथम तीन भाग 1913 में प्रकाशित हुए और चौथा भाग 1914 में प्रकाशित हुआ। सन् 1929 में आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक ग्रंथ की रचना हिन्दी शब्द सागर की भूमिका के रूप में की जो बाद में स्वतंत्र पुस्तक के रूप में प्रसिद्ध हुआ। डॉ. रामकुमार वर्मा ने 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' नामक ग्रंथ 1938 में प्रकाशित करवाया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', 'हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास' तथा 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल' आदि पुस्तकों की रचना की[1]।

- **कृष्ण काव्यधारा एवं कवि –**

मध्यकालीन सगुण भक्ति के आराध्य देवताओं में भगवान श्रीकृष्ण का स्थान सबसे महत्त्वपूर्ण है। पुराणों की कथाओं में इनका स्थान सर्वोपरि है। महाभारत में योगेश्वर कृष्ण का राजनीति विशारद महान् योद्धा के रूप में चित्रण किया गया है तथा भागवत पुराण में श्रीकृष्ण की बाल लीला तथा रासलीला का चित्रण है। आचार्य शुक्ल ने श्रीकृष्ण की भक्ति के संबंध में अपने विचार प्रकट किए हैं – "जनता पर चाहे जो प्रभाव पड़ा हो पर उक्त गद्दी के भक्त शिष्यों ने सुंदर सुंदर पदों द्वारा जो मनोहर प्रेम संगीत की धारा बहाई, उसने मुरझाते हुए हिन्दू जीवन को सरस और प्रफुल्लित कर दिया। इस संगीत धारा में दूसरे सम्प्रदायों के कृष्णभक्तों ने भी पुरा योग दिया[2]।"

कृष्ण भक्ति में कृष्ण का मधुर रूप ही सबके सामने आया और उनका लोकरक्षक और मर्यादा पूर्ण धर्म संस्थापक का चरित्र उद्घाटित नहीं हो पाया। विभिन्न कृष्ण भक्त कवियों ने अपने काव्य के माध्यम से प्रभु की विशद व्याख्या प्रस्तुत की है।

- **सूरदास –**

गोकुलनाथ कृत चौरासी 'वैष्णव की वार्ता' के अनुसार तथा सूरदास द्वारा रचित सूरसागर एवं सूर सारावली के अनुसार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इनका जन्म समय संवत् 1540 (सन् 1478 ई.) और मृत्यु संवत् 1620 (सन् 1580) स्वीकार की है। 1567 में जब वे जब वे वल्लभाचार्य जी से मिले और इन्होंने आचार्य जी से दीक्षा ग्रहण की थी। इनकी आज्ञा से सूरदास श्रीनाथ जी के मंदिर में भजन कीर्तन करने लगे। सूरदास मुख्य रूप से स्नेह, वात्सल्य,

---

[1] हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ. नगेन्द्र, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा, 2007, पूर्वपीठिका, पृ.सं. 29-34

[2] हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ.सं. 12

ममता और प्रेम के कवि रहे हैं। ये वात्सल्य रस के अवतार माने जाते हैं। इनके जैसा बालमनोविज्ञान का कोई ज्ञाता नहीं है। सूरदास के काव्य की महत्ता के विषय में बहुत से कवियों ने अपने विचार प्रकट किए हैं। यह उनकी सहृदयता का साक्षी है। सूरदास अष्टछाप के प्रथम कवि थे। महाराज रघुराजसिंह के कवित्त में सूरदास के लिए कहा गया है कि –

"मतिराम, भूषण, बिहारी, नीलकंठ, गंग,
बेनी, शम्भु, तोष, चिन्तामणि, कालिदास की।
ठाकुर, नेवाज, सेनापति, शुकदेव, देव,
पजनेश, घनानन्द, घनश्यामदास की।
सुन्दर, मुरारी, बोधा, श्रीपति हूँ, दयानिधि,
युगल, कविंद, त्यों गोविंद, केशौदास की।
भनै रघुराज और कबिन अनूठी उक्ति,
मोहिं लगी झूठी जानि जूँठी सूरदास की[3]।"

भ्रमरगीता सूरदास का सर्वश्रेष्ठ विरह एवं उपालम्भ काव्य है। 'सूरसागर' सूरदास की अक्षय कीर्ति का आधार है। इसमें बारह स्कंध हैं एवं पाँच हजार पद अभी उपलब्ध हैं। 'साहित्य लहरी' में राधा-कृष्ण का वर्णन है। यह अलंकार एवं नायिका भेद का ग्रंथ है। सूर-सारावली में 1103 पद हैं। इसमें कृष्णचरित के विविध पक्षों को उद्घाटित किया गया है। चित्रात्मकता, बिम्बात्मकता और सहजता सूर की काव्यभाषा के अंगभूत तत्त्व हैं। सूर के काव्य में संगीतात्मकता अद्भुत थी। यहाँ संयोग शृङ्गार का वर्णन सरस वर्ण योजना से किया गया है। लगता है एक-एक वर्ण को नग की भाँति जड़ा गया है –

"मानो भाई घन-घन अन्तर दामिनि।
घन दामिनी-दामिनी घन अन्तर, सोभित हरि ब्रज-भामिनी।
जमुन पुलिन मल्लिका मनोहर, सरद सुहाई, जामिनी।
सुन्दर ससि गुन-रूप रागि-निधि, अंग-अंग अभिरामिनी।
रूप-निधान स्याम सुन्दर घन, आनन्द मन विश्रामिनी।
खंजन-मीन-मयूर-हंस विक, भाइ भेद गज-गामिनी।
को गति गनै सूर मोहन संग, काम विमोह्यो कामिनी[4]॥"

सूर काव्य में माधुर्य प्रेम का भी अत्यन्त विशद और व्यापक वर्णन देखने को मिलता है। बचपन के साथी जब बड़े हो जाते हैं और उनका कैशोर प्रेम अद्भुत होता है। सूर के काव्य में पनघट लीला, दान लीला, मानलीला, रासलीला, चीरहरण लीला और भ्रमर गीत प्रसंग में यह छटा देखने को मिलती है। राधा द्वारा कृष्ण की मुरली को अपने प्रेम में व्यवधान मानने का सजीव चित्रण यहाँ सूरदास द्वारा किया गया है –

---

[3] सूरदास, प्रो. ब्रजेश्वर वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2001, पृ.सं.35
[4] सूर साहित्य में संगीत प्रवाह, डॉ. राजीव वर्मा, अमर ग्रन्थ पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2002, पृ.सं. 138

"अब मुरली-पति क्यों न कहावत।
राधा-पति काहे कौं कहिए? सुनत लाज जिय आवत।।
वह अनखात नाउँ सुनि हमरो, इत हमकों नहिं भावत।।
को मिलि चलै फेरि हमकी कौं, कै बनहीं किन धावत।।
काहे कौं द्वै नाव चढ़त हैं, अपनी बिपत्ति करावत।
सुनहु सूर यह कौन भलाई, हँसि-हँसि बेर बढ़ावत[5]।।"

- **कृष्णदास (1496-1578) –**

कृष्णदास का जन्म 1496 में गुजरात में राजनगर राज्य (अहमदाबाद) के चिलोतरा गाँव में हुआ था। ये बचपन में ही ब्रज में आकर बस गये थे। वल्लभ दिग्विजय के अनुसार वल्लभाचार्य जी ने मथुरा के विश्राम घाट पर निवास करते हुए इन्हें 1510 में अपने शरण में लिया और दीक्षा देकर पुष्टिमार्गीय भक्तं तथा अष्टसखाओं में शामिल किया। अपनी बुद्धि और भक्ति के कारण ये श्रीनाथ जी के मंदिर में 'अधिकारी' पद पर आसीन हुए। ये मंदिर प्रबंध का दायित्व देखते थे। कृष्णदास काव्य व संगीत के मर्मज्ञ थे। इन्होंने बाललीला, राधाकृष्ण-प्रेम-प्रसंग, रूपसौंदर्य आदि का मनोहारी वर्णन किया है। इनके शृङ्गारपूर्ण पदों में भाषा की प्रांजलता दृष्टव्य है। गुजराती इनका मातृभाषा थी। परन्तु सुंदर तत्सम ललित पदावली से संयुक्त पदों को देखकर यह विश्वास नहीं हो पाता कि इस कवि की मातृभाषा ब्रज के अतिरिक्त कोई दूसरी रही होगी। कृष्णदास के काव्य का एक पद यहाँ वर्णित है –

मो मन गिरधर छवि पर अटक्यौ।
ललित त्रिभंगी अंगन पर चलि, गयो तहांई लटक्यौ।
सजल स्याम घन चरननील ह्वै, फिर चित अनत न भटक्यौ।
'कृष्णदास' कियो प्रान निछावर, यह तन जग सिर पटक्यौ[6]।।

- **नंददास (1533-1583) –**

नंददास की गणना अष्टछाप में की जाती है। ये सूरदास के समकालीन थे। इनकी रचनाऐं सरस व मधुर हैं। इनके बारे में प्रसिद्ध है कि और कवि गढ़िया, नंददास जड़िया। इनकी 'रासपंचाध्यायी' बहुत प्रसिद्ध है। इसमें कृष्ण की रासलीला का अनुप्रासादियुक्त साहित्यिक भाषा में विस्तार के साथ वर्णन है। यह रोला छंद में लिखी गई है। इनके पदों में संस्कृत पदविन्यास का प्रवृत्ति दिखाई देती है। ये विट्ठलजी के शिष्य थे। इसके अतिरिक्त इन्होंने भागवत दशम स्कन्ध, रुक्मिणी मंगल, सिद्धांत पंचाध्यायी, रूपमंजरी, रसमंजरी, मानमंजरी, विरह मंजरी, नामचिन्ता, मणिमाला, अनेकार्थनाममाला (कोश), दानलीला, मानलीला, अनेकार्थमंजरी, ज्ञानमंजरी, श्यामसगाई, भ्रमरगीत और सुदामाचरित्र की रचना की है। गद्य में

[5]सूर काव्य का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन, डॉ. लालबहादुर श्रीवास्तव, विद्या प्रिण्टर्स, कानपुर, 1986, पृ.सं. 169
[6]हिन्दी साहित्य का इतिहास, नगेन्द्र, पृ.सं. 107

हितोपदेश और नासिकेतपुराण तथा 200 से ऊपर फुटकल पद भी मिलते हैं। रासपंचाध्यायी से पद लिया गया है –

"ताहि छिन उडुराज उदित रस-रास-सहायक।
कुंकम-मंडित-बदन प्रिया जनु नागरि नायक।।
कोमल किरन अरुन मानो बन व्यापि रही यों।
मनसिज खेल्यौ घुमड़ि धुरि रह्यो गुलाल ज्यों[7]।।"

भ्रमरगीत से -

फटिक छटा सी किरन कुजरंध्रन जब आई।
मानहुँ वितत बितान सुदेश तनाव तनाई।
तब लीनो कर कमल योगमाला सी मुरली।
अघटित घटना चतुर बहुरि अधरन सुर जुरली[8]।।

- **मीराबाई (1504-1563) -**

मीराबाई मेड़ता के राठौर रत्नसिंह की पुत्री थी। राव दूदाजी इनके दादा तथा राव जोधाजी की ये प्रपौत्री थी। इनका जन्म कुड़की नामक गाँव में हुआ था। इनका विवाह राणा सांगा के पुत्र भोजराज के साथ हुआ था। विवाह के कुछ समय बाद ही उनका देहांत हो गया। मीराबाई बचपन से ही कृष्ण-भक्ति में लीन रहती थी और श्रीकृष्ण को अपना सर्वस्व मानती थी। इस कारण ससुराल में इन्हें बहुत यातनाऐं दी गई। घरवालों के व्यवहार से खिन्न होकर ये द्वारका और वृंदावन के मंदिरों में भजन सुनाया करती थी। इनकी मृत्यु के बारे में कहा जाता है कि ये श्रीकृष्ण की मूर्ति में समा गई थी। इनका एक पद द्रष्टव्य है –

"राय श्री रनछोड़ दीजै द्वारका को वास।
संख, चक्र, गदा पदुम दरसै मिटै जन की त्रास।।
सकल तीरथ गोमती के रहन नित्य निवास।
संख झालर झाँझ बाजे सदा सुख की रास।।
तज्यौ देसरु बेस हूँ तजि तज्यो राना राज।
दास मीराँ लाल गिरधर तुम्हें अब सब लाज[9]।।"

मीराबाई 'माधुर्य भाव' की उपासना करती थी। उनका काव्य हृदय से निकले सहज प्रेमोच्छ्वास का साकार रूप है। उनकी रचनाऐं हैं – गीतगोविन्द की टीका, नरसी जी का मायरा, राग सोरठा का पद, मलार राग, राग गोविन्द, सत्यभामानु रूसणं, मीरा की गरबी, रुकमणी मंगल, नरसी मेहता री हुंडी आदि। इनके स्फुट पद 'मीराबाई की पदावली' में संग्रहीत है।

मीरा के काव्य की भाषा राजस्थानी-मिश्रित ब्रज है। इसमें शांत रस की अभिव्यञ्जना हुई है। माधुर्य व दैन्य-भाव उनके काव्य में मुख्य रूप से हैं। उनमें प्रेम की तल्लीनता प्रमुखता से पाई

---

[7] हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचंद्र शुक्ल, पृ.सं. 170
[8] वहीं, पृ.सं. 171
[9] प्राचीन एवं मध्यकालीन काव्य, रामदरश मिश्र, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2016, पृ.सं. 101

जाती है। मीरा अपने आराध्य के प्रेम में जिस रूप में अपने भाव प्रकट करती है वे इस पद में अद्भुत हैं –

"घड़ी अंक नहिं आवड़ै, तुम दरसण विन मोय
तुम हो मेरे प्राण जी! का सूं जीवणं होय
धान न भावै, नींद न आवै, विरह सतावै मोहि
घायल-सी घूमत फिरूं रे, मेरो दरद न जाणै कोइ
दिवस तो खाय गमाइयो रे, रैण गमायी सोइ
प्राण गमायो झूरतां रे, नैण गमाया रोइ
जो मैं असी जाणती रे, प्रीत कियां दुख होइ
नगर ढंढोरा फेरती रे, प्रीत करो मत कोई
पंथ निहारूं, डगर बुहारूं, अभी मारग जोइ
मीरां के प्रभु कब रे मिलोगे, तुम मिळियां सुख होई[10]।"

- **रसखान (1533-1618) -**

रसखान दिल्ली के पठान सरदार थे। रसखान ने गोस्वामी विट्ठलनाथ जी से वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षा ली थी। ये श्रीकृष्ण को बहुत मानते थे तथा गोस्वामी जी के बड़े कृपापात्र शिष्य थे। रसखान की चार कृतियाँ 'प्रेम वाटिका', 'दानलीला', 'सुजान रसखान' और 'अष्टयाम' हैं। 'सुजान रसखान' स्फुट छंदों का ग्रंथ है जिसमें 181 सवैये, 17 कवित्त, 12 दोहे तथा 4 सोरठे हैं। 'प्रेम-वाटिका' में राधा-कृष्ण को मालिन-माली मानकर प्रेम के गूढ़ तत्त्व को निरूपित किया गया है। यह 53 दोहों की कृति है। 'दानलीला' 11 छंदों का छोटा-सा पद्य-प्रबंध है। जहाँ एक पौराणिक प्रसंग को राधा-कृष्ण के संवाद के रूप में चित्रित किया है। 'अष्टयाम' में श्रीकृष्ण के प्रातः जागरण से रात्रि-शयन तक की दिनचर्या का वर्णन है। रसखान ने शृङ्गार की मधुर अभिव्यञ्जना की है। शृङ्गार का आलम्बन श्रीकृष्ण है। श्रीकृष्ण के बाल-रूप माधुरी का वर्णन सजीवता से किया है। वात्सल्य रज का वर्णन भी बहुत मनोहारी है। इनकी भाषा ब्रज है। उन्होंने कवित्त व सवैया छंद को अपने काव्य में प्रयोग कर अपनी स्वच्छन्द वृति को उजागर किया है। उनकी भक्ति हृदय की मुक्त साधना है और शृङ्गार वर्णन भावुक हृदय की उन्मुक्त अभिव्यक्ति है। रसखान मानते हैं भगवान प्रेम के वशीभूत हैं, जहाँ प्रेम है वही वही प्रिय हैं। रसखान के प्रेम का सजीव चित्रण इस प्रकार प्राप्त होता है –

"मोर पखा सिर ऊपर राखिहौं, गुंज की माल गले पहिरौंगी।
ओढ़ि पितांबर लै लकुटी, बन गोधन ग्वालन संग फिरौंगी।।
भावती सोई मेरो रसखान सो, तेरे कहे सब स्वाँग करौंगी।
या मुरली मुरलीधर की, अधर न धरी अधरा न धरौंगी।।
सेस महेस गनेस दिनेस, सुरानसहु जाहिं निरंतर गावैं।

[10] मीरा मुक्तावली, नरोत्तमदास स्वामी, मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, 2021, पृ.सं. 33

जाहि अनादि अनंत अखंड, अचेद अभेज सुवेद बतावैं।।
नारद से सुक व्यास रहैं पचि, हारे तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भर छाछ पै नाच नचावैं[11]।।"

- **ध्रुवदास (1573-1643) -**

ध्रुवदास का जन्म देवबन्द (सहारनपुर) में एक कायस्थ कुल में हुआ था। इनके परिवार में वैष्णव भक्ति को मान्यता थी अतः ये बचपन से ही भक्तिमार्ग की ओर उन्मुख हो गये। ये राधावल्लभ सम्प्रदाय के पक्षधर थे। ये मानते थे कि प्रेम-लक्षणा मधुरा भक्ति का जैसा रूप राधावल्लभीय मत में गृहीत हुआ उसका उसी अनुरूप वर्णन अपनी वाणी में करना चाहिए। नित्य विहार के मर्म को विशद विस्तार के साथ सर्वप्रथम इन्होंने ही स्फुटित किया। निकुंज लीला का अन्य लीलाओं से भेद भी इन्होंने किया था। माधुर्य भक्ति की तल्लीनता और रसव्यञ्जक पदावली की रोचकता इनके अतिरिक्त मध्ययुगीन अन्य भक्त कवियों में नगण्य है। काव्य-रूढ़ियों का भी इन्होंने पूर्णतः पालन किया है। इनकी भक्ति अनन्य है, इनके ग्रंथों की संख्या 40 मानी जाती है। जिनमें व्रजलीला, रंगविहार, रस विहार, वृंदावनसत, नेहमंजरी, सुखमंजरी प्रमुख है। इनकी मृत्यु 1643 में हुई। यहाँ उनके दोहे हैं –

"प्रेम-रसासव छकि दोउ, करत बिलास विनोद।
चढ़त रहत, उतरत नहीं, गौर स्याम छवि मोद।।"
"कहि न सकत रसना कछुक प्रेम-स्वाद आनन्द।
को जाने 'ध्रुव' प्रेम-रस, बिन बृंदावन चंद।।[12]"

- **स्वामी हरिदास (1478-1573) -**

स्वामी हरिदास सखी सम्प्रदाय के संस्थापक थे और अकबर के समय में सिद्ध भक्त और संगीत के ज्ञाता माने जाते थे। ये सनाढ्य ब्राह्मण थे। अकबर इनके संगीत से बहुत प्रभावित था वह तानसेन के साथ वेश बदलकर गाना सुनने आया था। तानसेन द्वारा गलत गाने पर स्वामी हरिदास ने शुद्ध रूप से गायन करा तो अकबर को इनके गायन को सुनने का मौका मिला। ये वृंदावन को छोड़कर कुछ समय के लिए निधुवन में भी वास करने लगे थे। इनके पदों में कठिन राग-रागनियों का प्रयोग होने से वे पढ़ने में सरल नहीं लगते हैं। पदों में अन्य कवियों की तरह सर्वत्र मधुरता व कोमलता नहीं है परन्तु वे उत्कृष्ट हैं। इनके पद 'हरिदास जी के ग्रन्थ', 'स्वामी हरिदास जी के पद' तथा 'स्वामी हरिदास जी की बानी' आदि संग्रहों के रूप में मिलते हैं। एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

"ज्यौंही ज्यौंही तुम राखत हौं, त्यौं ही – त्यौं ही रहियत हौं, हे हरि!
और अपरचै, पाय धरौं सुतौं कहौं कौन के पैड भरि।।
जदपि हौं अपनो भायो कियो चाहौं, कैसे करि सकौं जो तुम राखौ पकारि।

---

[11] हिन्दी साहित्य का इतिहास, रामचन्द्र शुक्ल, पृ.सं. 183
[12] https://www.hindi.org/poets/dhruvdas/dohe

कहै हरिदास पिंजरा के जनावन लौ तरफराय रह्यो उड़िबै को कितोऊ करि[13]॥"

- **श्रीभट्ट -**

श्रीभट्ट निम्बार्क संप्रदाय के प्रसिद्ध विद्वान् केशव काश्मीरी के प्रधान शिष्य थे। श्रीभट्ट जी कृष्ण की ललित लीलाओं का वर्णन करने वाले, सुकवि, हरिभक्ति प्रचारक और अज्ञान के हर्त्ता माने जाते हैं। इनके पद छोटे-छोटे हैं, कविता सीधी-सादी एवं भाषा ब्रज है। श्रीभट्ट जी का ब्रज भाषा में लिखा गया एक ही ग्रंथ है – 'युगल शतक'। इसमें 100 पद है। यह ग्रंथ श्रीकृष्ण भक्तों में बहुत आदर से देखा जाता है। इसके अतिरिक्त एक और छोटी पुस्तक 'आदि बानी' भी मिलती है माना जाता है कि ये जब ये अपने पद जिस भाव रूप में गाते थे उसी के अनुरूप इन्हें प्रभु की प्रत्यक्ष झलक मिल जाती थी। युगल उपासना में श्रीराधा का प्राधान्य होता है। राधा-कृष्ण के प्रेम की मधुर व्यंजना की है। दोनों पल-भर को भी विलग नहीं होते हैं। भट्ट जी को सम्प्रदाय में 'हितू सखी' का अवतार माना जाता है। उन्होंने अनेक पदों में स्वयं सखी-रूप में रहकर दम्पत्ति की लीलाओं को देखने की इच्छा व्यक्त की है :-

"रस की रेलि बेलि अति बाढ़ी।
दम्पति की हित बाबरि बिहरनि, रहो सदा मेरे चित चाढ़ी।
निरखत रहो निपट हितकारिनि, पिय प्यारिनि की गुन गति माढ़ी।
जै 'श्रीभट' उतकट संघट सुख, केलि सहेलि निरन्तर ठाढ़ी।।[14]"

- **हितहरिवंश (1502) -**

राधावल्लभीय सम्प्रदाय के प्रवर्तक गोसाई हितहरिवंश का जन्म संवत् 1559 में मथुरा से 4 मील दूर दक्षिण बदगांव में हुआ। ये गौड़ ब्राह्मण थे। गोसाई जी गृहस्थ थे। इनके चार पुत्र एवं एक कन्या थी। गोसाई जी ने संवत् 1582 में श्री राधावल्लभ जी की मूर्ति वृंदावन में स्थापित की और वहीं विरक्त भाव से रहने लगे। ये संस्कृत के विद्वान् होने के साथ-साथ भाषा विज्ञान के ज्ञाता थे। आपके पदों का संग्रह 'हितचौरासी' के नाम से प्रसिद्ध है क्योंकि इसमें 84 पद हैं। ब्रजभाषा की रचनाऐं सरस और हृदयग्राहिणी है। अपनी रचना की मधुरता के कारण हितहरिवंश जी श्रीकृष्ण की मुरली का अवतार कहे जाते हैं। इनकी फुटकल बानी भी मिलती है, जिसमें सिद्धांत संबंधी पद हैं। इनकी रचना के उदाहरण निम्न हैं -

हित चौरासी से –

"ब्रज नव तरुनि कदंब मुकुटमनि स्यामा आजु बनी।
नख-सिख लौं अँग अँग माधुरी मोहे श्याम धनी।।
यों राजति कबरी गूथित कच कनक कंज बदनी।
चिकुर चंद्रिकन बीच अधर विधु मानौ ग्रसित फनी।।
साँभग रस सिर स्रवत पनारी पिस सीमत ठनी।

---

[13] हिन्दी साहित्य का इतिहास, पूर्व-मध्यकाल : भक्तिकाल, रामचन्द्र शुक्ल, पृ.सं. 179
[14] हिन्दी साहित्य का इतिहास, नगेन्द्र, पृ.सं. 213

भ्रुकुटि काम कोदंड, नैन शर, कज्जल रेख अनी।।
भाल तिलक, ताटंक गड पर, नासा जलज मनी।
दसन कुंद, सरसाधर पल्लव, पीतम मन समनी।।
हितहरिबंस प्रसंसित स्यामा कीरति बिसद धनी।
गावत श्रवननि सुनत सुखाकर विश्व दुरित दवनी।।[15]"

उक्त कृष्णोपासक भक्त कवियों के अतिरिक्त अन्य भक्त कवि भी हुए हैं। जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से कृष्ण चरित्र का विशद वर्णन किया है।

- **उपसंहार –**

यह कृष्ण काव्य परम्परा निर्बाध गति से चलती रही है। विभिन्न सम्प्रदायों के भक्त कवियों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया है। कृष्ण के जीवन चरित्र को उनकी लीलाओं को साकार रूप दिया है। कृष्ण भक्त कवियों ने साहित्य में प्रेममाधुर्य का जो सुधास्तोत्र बहाया है, उसके प्रभाव से काव्य में सरसता एवं प्रफुल्लता बनी रही है।

*शोधच्छात्रा, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर, जयपुर, राजस्थान।
**विभागाध्यक्ष, आधुनिक विभाग, केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर परिसर, जयपुर, राजस्थान।

[15] हिन्दी साहित्य का इतिहास, पूर्व-मध्यकाल : भक्तिकाल, रामचन्द्र शुक्ल, पृ.सं. 175